VOL- VIII ISSUE- I JANUARY 2021 PEER REVIEW e-JOURNAL IMPACT FACTOR 7.149 ISSN 2349-638x

पंचायती राज : आधुनिक चुनौतियां एवं उनका समाधान

ज्योति सक्सेना
शोधार्थी,
लोक प्रशासन विभाग
श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टीबड़ेवाला विश्वविद्यालय
विद्यानगरी, चुड़ेला, झुंझुनूं, राजस्थान—३३३००१

डॉ. जुल्फिकार
अनुसंधान निदेशक
लोक प्रशासन विभाग
श्री जगदीशप्रसाद झाबरमल टीबड़ेवाला विश्वविद्यालय

सारांश

भारत में पंचायती राज व्यवस्था ग्रामीण समाज की आत्मा में समा चुकी है जो लोकतंत्र की आधारशिला, संस्कृति की संवाहक और कल्याणकारी राज्य की संकल्पना के आदर्श प्रतिमान के रूप में जानी जाती है। पंचायती राज व्यवस्था केवल एक व्यवस्था ही नहीं है अपितु एक जीवन दर्शन भी है जो समाज में अनवरत अस्तित्व में रही है तथा ग्रामीण समाज की आत्मा में रच बस गया है। आम जनता में पंचायती राज संस्थाएं लगातार जन जागृति, सामाजिक सद्भाव व जन सहयोग को बनाए रखने का प्रयास कर रही है और लोकतंत्र की सशक्त प्रहरी बन रही है। इतना प्रभावी होने के बाद भी इन संस्थाओं को निरन्तर नई—नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है जैसे भ्रष्टाचार, आरक्षण की समस्या, जटिल कार्य प्रणाली, सदस्यों की उदासीनता, परम्परागता नियम आदि।

आज इन संस्थाओं को दोहरी भूमिका निभानी होगी। एक ओर तो इन संस्थाओं को इन समस्याओं का मुकाबला करना होगा दूसरी ओर इनका समाधान भी खोजना होगा।

मूल शब्द *: संविधान, संवाहक, दोहरी, प्रहरी, आदर्श, प्रतिमान, अनवरत, जनजागृति, सर्वोदय, नौकरशाही, पुरजोर, विभेदीकरण, निर्वाचित, दलगत राजनीति, मार्गदर्शन, पड़ौसियों, मस्टररोल।*

प्रस्तावना :

पंचायती राज संस्थाओं का जन्म स्थानीय समाज शासन संस्थाओं की प्रगति के इतिहास में एक बड़ी घटना है, जो राष्ट्र निर्माण में लगी महत्त्वपूर्ण एजेन्सी है। पंचायती राज उस लोकतंत्र का प्रतिनधित्व करता है जिसकी जड़े लोगों में मौजूद हैं। ग्राम स्तर पर लोकतांत्रिक प्रक्रिया की सफलता बहुत कुछ लोगों की सक्रिय भागीदारी पर निर्भर करती है। पंचायती राज के बिना लोकतंत्र की कल्पना महात्मा गांधी के सपनों को नकारना है। गांधीजी के स्वतंत्रता आन्दोलन का प्रमुख उद्देश्य भारत में ग्राम—राज्य के माध्यम से राम—राज्य का स्वप्न साकार करना था भारत में सदियों से 'पंचायतें' एक विशिष्ट प्रकार की प्रकृति एवं कार्यशैली का प्रतिनिधित्व करती रही हैं। कभी ये जातीय प्रभुता की परिचायक रही हैं तो कभी लोकतंत्र का स्वाभाविक प्रवाह बनी हैं।

संविधान के अनुच्छेद ४० में कहा गया — "राज्य पंचायतों को सुदृढ़ बनाने और उन्हें ऐसी शक्तियां एवं अधिकार सौंपने के लिए कदम उठाएगा, जो उन्हें स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक हों।"

महात्मा गांधी ने भारत में सच्चे लोकतंत्र की कल्पना की थी। उनकी मान्यता थी कि सच्चा लोकतंत्र केन्द्र में बैठे हुए २० व्यक्तियों द्वारा नहीं चलाया जा सकता, उसे प्रत्येक गांव के लोगों द्वारा नीचे के स्तर से चलाना होगा। गांधीजी ने ग्राम स्वराज्य की जो अवधारणा प्रतिपादित की थी उसमें 'गांव' विकेन्द्रीकृत राजनीतिक सत्ता का एक ऐसा

घटक माना गया था जिसके माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति शासन के कार्यों में भाग ले सकेगा।

कोई भी देश अपने व्यक्तित्व का तब तक विकास नहीं कर सकता जब तक कि वह अपने भाग्य की रूपरेखा तैयार करने में स्वतंत्र न हो। इसलिए यदि हम चाहते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से विकास हो तो यह अनिवार्य है कि हम उन्हें समुचित अधिकार, साधन, आवश्यक प्रशिक्षण और प्रशिक्षित कर्मचारियों की सुविधाएं प्रदान करें। उन्हें अपने क्षेत्र के विकास के लिए स्वयं नीति निर्धारित करने और उसे लागू करने का अधिकार प्राप्त हो। सच्चे लोकतंत्र की परिकल्पना भी यही है कि केवल उपर से शासन न चलाया जाए बल्कि देश के प्रत्येक कोने से बिखरी हुई प्रतिभाओं का विकास किया जाए। यह तभी सम्भव है जब जनसाधारण सक्रिय रूप से सरकार में सीधा भाग ले सकें। सक्रिय सरकार में सीधे भाग लेने की इस प्रक्रिया को ही लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण अथवा पंचायती राज कहते हैं।

२ अक्टूबर, १९५९ को राजस्थान पहला राज्य था जिसने इस योजना को लागू किया तथा कालान्तर में देश के अधिकांश राज्यों ने इस योजना को स्वीकार कर लिया।

भारत को गाँवों का देश कहा जाता है क्योंकि भारत की ८० प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है। इसलिए पंचायती राज के नाम से ग्रामीण स्थानीय स्वशासन का प्रभाव अपने आप सामने आता है। पंचायती राज से हमारी भावनाएं जुड़ी होती हैं।

भारत में पंचायती राज को तीन उद्देश्यों के साथ जोड़ा गया है। इसमें पहला लक्ष्य है सामुदायिक उद्देश्यों को प्राप्ति का साधन है। दूसरा लक्ष्य यह है कि पंचायती राज सामुदायिक विकास कार्यक्रम व राज्य द्वारा सौंपी गई योजनाओं को पूरा करने का साधन है। तीसरा उद्देश्य यह सुनिश्चित करता है कि पंचायती राज स्थानीय स्वशासन का रूप मानता है और कहता है कि पंचायती राज अपने प्रारम्भिक व अंतिम विश्लेषण में यह स्थानीय स्वशासन की इकाई व ग्राम स्तर पर लोकतंत्र का विस्तार है। पहला दृष्टिकोण पंचायती राज को साधन मानता है जबकि दूसरा दृष्टिकोण कहता है कि पंचायाती राज सर्वोदय का भी अभिन्न अंग है। यह समाज में एक ऐसी नई व्यवस्था का सूत्रपात करता है जो राज्य सरकार व नौकरशाही के लिए उनकी भूमिका को तय करने वाली एजेन्सी है।

भारत में २ अक्टूबर, १९५२ को सामुदायिक विकास कार्यक्रम के श्रीगणेश के साथ ही पंचायती राज का प्रारम्भ हुआ। बलवंत राय मेहता समितित ने भारत में पंचायी राज में त्रिस्तरीय संरचना को अपनाने की पुरजोर सिफारिश की और कहा कि प्रजातांत्रिक संस्थाओं में सत्ता का बंटवारा किया जाए ताकि केन्द्र सरकार के निर्णय में जनता की भागीदारी सुनिश्चित हो और सरकारी कर्मचारी व नौकरशाही जनता के नियंत्रण में कार्य कर सकें। २ अक्टूबर, १९५९ को ग्रामीण स्थानीय स्वशासन में पंचायती राज व्यवस्था को अपनाया गया था।

अशोक मेहता सिमति, १९७८ की सिफारिश थी कि प्रशासन का विकेन्द्रीकरण अनिवार्य है साथ ही ग्रामीण विकास में नई तकनीकों को जनता तक पहुँचाने के लिए नौकरशाही का प्रयोग किया जाए और जनता द्वारा निर्वाचित संस्थाओं को इनसे बाहर रखा जाए।

बलवंत राय मेहता से राजीव गांधी के समय तक पंचायती राज संस्थाओं को प्रभावशाली बनाने के अनेक प्रयास किए गए किन्तु वह प्रयास पूरे नहीं हो पाए थे। ७३वें संविधान संशोधन ने पंचायती राज के विषय में कहा था कि भारत बहुत बड़ा देश है। जन कल्याण के लिए सत्ता का विकेन्द्रीकरण किया जाए, पंचायती राज किसी दलगत राजनीति का विषय नहीं है। पंचायती राज का अस्तित्व संविधान के राजनीति—निदेशक तत्त्वों में पल्लवित हुआ है। साथ ही केन्द्र व राज्य स्तर पर कार्य कर रहे वर्तमान ढांचे में दलालों के स्वार्थ फल—फूल रहे हैं। अगर प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण को अपनाया जाता है तो इनका स्वार्थ धीरे—धीरे कम होता जाएगा।

७३वें संविधान संशोधन के अनुसार स्थानीय स्वशासन मानव इतिहास की पुरानी राजनैतिक

संरचना है। इसका महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि मनुष्य नियम व अनुशासन तभी मानता है जब उसमें पड़ौसियों के साथ मिलकर रहने की आदत विकसित हो जाती है। पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा देना एक महत्त्वपूर्ण कदम है परन्तु स्थानीय स्वशासन का प्रावधान, संविधान की राज्यसूची की ७वीं अनुसूची में किया गया है। इसलिए इसके लिए राज्य उत्तरदायी है। भारत के राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक विकास में पंचायती राज की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। स्व. इंदिरा गांधी जी ने पंचायतों के बारे में कहा था कि ग्रामीण जनता के द्वारा पंचायतों का निर्माण होता है इसलिए इन संस्थाओं पर नियंत्रण भी जनता का होना चाहिए। पंचायतें ग्रामीण जनता की ताकत का मिलाजुला रूप होती हैं।

पंचायतों की आवश्यकता इसलिए होती है, क्योंकि —

(१) इसमें शासन व्यवस्था उच्च अधिकारी या चुनी हुई संस्थाओं के निहित नहीं रहकर पंचायतों के पास पहुँच जाती हैं।

(२) पंचायती राज भारत के स्वस्थ लोकतांत्रिक परम्पराओं को स्थापित करने का आधार है।

(३) देश के सम्पूर्ण विकास के लिए जिस प्रभावी नेतृत्व की आवश्यकता है वह पंचायतों द्वारा उपलब्ध करवाया जाता है।

(३) अलग—अलग विकास कार्यों के लिए जनता का सहयोग चाहिए और कार्य पंचायती राज द्वारा सफलतापूर्वक किया जाता है।

(४) यह व्यवस्था ग्रामीण जनता की लोकतंत्र में जागृति उत्पन्न करती है।

(५) पंचायती राज व्यवस्था लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण से सम्बन्धित है इसलिए यह व्यक्तियों के कल्याण हेतु प्रभावशाली मानी जाती है।

इतना सब होने के बाद भी पचांयतों को बहुत सारी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है जो इस प्रकार से हैं —

(१) साधनों की कमी :

पंचायती राज के पास प्रभावशाली साधन नहीं है इसलिए पंचायतें नागरिक सुविधा को उपलब्ध कराने के लिए ग्रामीण क्षेत्र के विकास का कार्य अपने हाथ में नहीं लेती हैं।

(२) मार्गदर्शन व सहायता का अभाव :

पंचायतों को कार्य करने के दौरान लगातार मार्गदर्शन नहीं मिलता है। साथ ही प्रशिक्षित सचिवों की कमी के कारण पंचायतें काम समय पर नहीं कर पाती हैं। जिस दिन पंचायतों की बैठक होती है उस दिन कुछ काम दिखाई देता है बाकि दिन कुछ नहीं होता है।

(३) पंचों की उदासीनता व गुटबंदी :

जैसे ही पंचायती राज की स्थापना हुई है वैसे ही ग्रामीण जीवन में दूसरी चीजों के साथ—साथ दलबंदी व गुटबंदी का भी जन्म हुआ था। चुनावों के परिणामस्वरूप जो कटुता जन्म लेती है वो सारे ग्रामीण वातावरण को खराब कर देती है। साथ ही पंचायती राज संस्थाओं में पंच लोग कार्य के प्रति जागरूक नहीं होते हैं। वो सारा काम सरपंच पर छोड़ना चाहते हैं।

(४) पुलिस अधिकारियों का असहयोग :

अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि पुलिस अधिकारी पंचायतों को सहयोग देंगे किन्तु अधिकांश मामलों में पंचायतों के निर्णय लागू नहीं हो पाते थे क्योंकि पुलिस का सहयोग संस्थाओं को समय पर नहीं मिल पाता है साथ ही अपराधियों के विरुद्ध भी प्रभावशाली कार्यवाही नहीं हो पाती है।

(५) जटिल नियम :

नियम इतने कठिन होते हैं कि अधिकांश सरपंच व पंच पंचायतों के काम ही नहीं करते हैं। वह जटिल कार्यप्रणाली से बचना चाहते हैं। बहुत से नियम तो असामयिक है जैसे विकास कार्यों की योजना में ६० प्रतिशत मजदूरी व ४० प्रतिशत सामान की लागत पर सरकार स्वीकृति देती है किन्तु वास्तव में मजदूरी की लागत ३० प्रतिशत व सामान की लागत ७० प्रतिशत आती है। परिणामस्वरूप सरपंच को भुगतान करने में समस्या

आती है और प्रगति कार्य अत्यधिक प्रभावित होता है। सरपंच को फर्जी मस्टररोल भरना होता है। एक मजदूर काम करता है और दो मजदूरों की हाजरी दिखानी पड़ती है। परिणाम यह निकलता है कि जैसे ही विरोधियों को फर्जी मस्टररोल के बारे में पता चलता है वह सरपंच के विरुद्ध मुकदमा दर्ज कराने का प्रयास करते हैं और सरपंच को डराते हैं।

(६) भ्रष्टाचार :

पंचायती राज व्यवस्था में भ्रष्टाचार अपनी जड़े जमा चुका है। योजनाओं के निर्माण व स्वीकृति दोनों के बीच निर्वाचित अधिकारी व सरकारी अधिकारी के बीच तालमेल बन चुका है। अगर भ्रष्टाचार की यही रफ्तार रही तो आने वाले सालों में पंचायती राज का दूसरा रूप ही सामने आएगा। राजस्थान में जयसमंद जिले की ग्राम पंचायत ने पंचायत भवन के निर्माण को तीन बार समय—समय पर बनना बताकर सरपंच, ग्रामसेवक ने भुगतान उठाया है।

(७) आरक्षण व्यवस्था :

७३वें संविधान संशोधन के बाद पंचायती राज के तीनों स्तरों पर जो आरक्षण व्यवस्था अपनाई गई है वो अपने आप में पूर्ण नहीं हैं। आरक्षण के कारण सरपंच पद पर जिस वर्ग का उम्मीदवार खड़ा होता है वह वर्ग तो निर्वाचन के प्रति जागरूक रहता है जबकि दूसरा वर्ग उदासीन हो जाता है। जिस वर्ग का सरपंच चुनावों में जीतता है वो दो—तीन साल तक तो सही ढंग से काम करता है किन्तु बाद के दो साल उदासीन रहता है। क्योंकि उसे पता होता है कि अगले चुनावों में वह आरक्षण के कारण खड़ा नहीं हो सकता है।

७३वें संविधान संशोधन के बाद निर्वाचन तो हर पाँच वर्ष बाद होने लगे हैं किन्तु ग्रामीण जीवन की अच्छाइयां नहीं बढ़ रही है। मनमुटाव बढ़ रहे हैं इसलिए राज्य सरकार पंचायतों को अधिक अधिकार देने से डर रही है। सरपंच के केवल दो कार्य रह गए हैं — एक तो अपने विरोधियों से बदला लेना दूसरा पंचायत के धन को जितना हड़प सके उतना हड़पना। परिणामस्वरूप ग्रामीण जनता व सरपंच के मधुर सम्बन्ध नफरत में बदलते जा रहे हैं।

पंचायती राज संस्थाओं की समस्याओं को दूर करने के लिए कुछ व्यावहारिक कदम निम्नानुसार हैं —

(१) पंचायती राज संस्थाओं के विकास के लिए जैसे उड़ीसा व गुजरात में सलाहकार स्तर पर मुख्यमंत्री व मंत्री की अध्यक्षता में जैसी समिति बनी है वैसी राजस्थान में भी बननी चाहिए।

(२) ७३वें संविधान संशोधन में पिछड़ी जाति के आरक्षण के क्या प्रावधान होंगे यह राज्य के विवेक पर छोड़ा गया है। इस विषय में युक्तिसंगत नियम बनाए जाने चाहिए।

(३) जिला स्तर पर समन्वित योजनाएं को तैयार करने के साथ—साथ निष्पादन व मूल्यांकन की जिम्मेदारी भी सौंपी जानी चाहिए। जिला आयोजना समिति को जिले के ग्रामीण क्षेत्रों से समबन्धित राज्य सरकार की सभी योजनाओं के पुनः निरीक्षण, निरीक्षण व मोनिटरिंग की शक्ति देना एक महत्त्वपूर्ण कदम होगा।

(४) ११वीं अनुसूची में जो २९ विषय राज्य सरकार ने पंचायती राज संस्थाओं को सौंपी जाने वाली अधिकतम शक्तियां नहीं हैं राज्य सूची के दूसरे अधिकार भी पंचायती राज संस्थाओं को सौंपे जा सकते हैं।

(५) शासन का संचालन केवल केन्द्र या राज्य सरकार नहीं करती बल्कि पंचायती राज संस्थाएं तीसरे स्तर के रूप में महत्त्वपूर्ण है।

(६) जनता का हर स्तर पर सहयोग लिया जाए ताकि योजनाओं का निर्माण प्रभावी तरीके से किया जा सके।

(७) ग्रामसभा को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक है कि उसकी सिफारिशें पंचायतों के लिए बाध्यकारी बनाई जाए।

(८) पंचायती राज संस्थाओं के लिए कर्मचारियों के चयन हेतु पंचायती राज सेवा चयन आयोग का निर्माण व कर्मचारियों के लिए

प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्थाएं की जानी चाहिए।

(९) पंचायती राज संस्थाओं के नियंत्रण की प्रक्रिया नियामकीय व निषेधात्मक नहीं होकर विकासात्मक व सकारात्मक होनी चाहिए। नियंत्रण इस प्रकार का हो कि संस्थाएं स्वावलम्बी, आत्मनिर्भर व कार्यकुशल बन सके।

निष्कर्ष :

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि पंचायती राज संस्थाओं के सामने अनेक चुनौतियां हैं जिनका सामना इन संस्थाओं को करना है और समाधान करना है। पंचायती राज संस्थाओं को ऊर्जावान बनाने के लिए इन संस्थाओं का पुनरावलोकन करना होगा। पहल तो हमें वहीं से करनी होगी जहाँ हम वर्तमान में हैं। आज पंचायती राज संस्थाओं का कैसा स्वरूप है? उनमें क्या—क्या सुधार होंगे? उन्हें कैसे सक्षम व मजबूत बनाया जाए इस दिशा में हमें सोचना है। साथ ही सामाजिक दृष्टिकोण में परिवर्तन करना होगा, साक्षरता, जागरूकता, कार्यकुशलता के द्वारा महिला सशक्तीकरण का सपना पूरा करना होगा। महिला शिक्षा को महत्त्वपूर्ण मानते हुए महिला जन प्रतिनिधि के विरुद्ध उत्पीड़न के मामलों में कठोर दण्ड की व्यवस्था करनी होगी।

पंचायती राज संस्थाओं के सुधार के सम्बन्ध में यह नहीं भूलना है कि आज का "पुरुषार्थ" ही कल का "भाग्य" बनेगा।

संदर्भ सूची :

१. जोशी, आर. पी. एवं मंगलानी, रूपा (सं.) : भारत में पंचायती राज, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, २०००

२. रविन्द्र शर्मा : विलेज पंचायत इन राजस्थान : इन एडमिनिस्ट्रेटिव प्रोफाइल, १९८७

३. जैन, एस.सी. : भारत में पंचायती राज व सामुदायिक विकास, अलीगढ़ पब्लिशर्स

४. आर्य, विमला : पंचायती राज में महिलाओं की भूमिका, राजस्थान ग्रंथागार, जोधपुर

५. शर्मा, अरूण कुमार : भारत में स्थानीय शासन, राधाकृष्ण प्रकाशन

६. गुरूशरण : पंचायती राज को जानिए, अखिल भारत सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी

७. गौड़, के.के. : भारत में ग्रामीण नेतृत्व का उदीयमान स्वरूप, मोहित पब्लिकेशन

८. श्रीवास्तव, आशुतोष : विकेन्द्रीकरण और पंचायती राज व्यवस्था, सनराइज पब्लिकेशन्स

९. बलवंत राय मेहता समिति प्रतिवेदन, १९५७

१०. गिरधारी लाल व्यास समिति प्रतिवेदन, १९७३, सामुदायिक विकास व पंचायत विभाग, राजस्थान सरकार

११. राठौड़, गिरवर सिंह, भारत में पंचायती राज, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण, २००४

१२. मौर्य, शैलेन्द्र, महिला राजनैतिक नेतृत्व एवं महिला विकास, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, २०११

१३. कटारिया, सुरेन्द्र, कार्मिक प्रशासन, आर. बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, संशोधित संस्करण, २०१०

१४. सिंह, कटार, ग्रामीण विकास : सिद्धान्त, नीतियां एवं प्रबन्ध, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, २०११

VOL- VIII ISSUE- I JANUARY 2021 PEER REVIEW e-JOURNAL IMPACT FACTOR 7.149 ISSN 2349-638x

पं. वि. ना. भातखंडे द्वारा रचित हिंदुस्तानी संगीत पध्दती क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 2 और 3 में उपलब्ध आश्रय रागों के लक्षणगीतों का चिकित्सक अध्ययन

प्रा. डॉ. रवींद्र रामभाऊ इंगळे,
संगीत विभाग प्रमुख, कै. सौ. कमलताई जामकर महिला महाविदयालय,
जिंतुर रोड, परभणी - 431401 (महाराष्ट्र)

रागोंकी जानकारी (स्वर, थाट, वादि - संवादि, जाती, गानसमय इत्यादि.) देनेवाला गीत इस दृष्टीसे लक्षणगीत का महत्व अनन्यसाधारण माना गया है | किसी भी राग को ठिक तरहसे समझने हेतु पर्वापार गुणिजनोंने उस राग का स्वरुप प्राचीन संगीत ग्रंथोंमें खोजनेका प्रयास किया है | मतंगमुनीव्दारा लिखीत ग्रंथ "बृहद्देशी" में "राग" शब्द की प्रथमत: उत्पत्ती पायी गयी है | उससे पूर्व भरतमुनीव्दारा लिखीत "नाटयशास्त्र" ग्रंथ में "जातीगायन" का संदर्भ मिलता है | बृहद्देशी के पश्चात राग यह शब्द सुस्थापित हुवा और तदनंतर शारंगदेवव्दारा लिखीत "संगीतरत्नाकर" ग्रंथ में "रंजयति इति राग:"इस प्रकार राग को परिभाषित किया गया | संक्षेप में यहाँ यह कहा जा सकता है की राग शब्द की उत्पत्ती एवं उन रागों का शास्त्रीय स्वरुप खोजने में आजतक कई सारे ग्रंथ लिखे गये | मिसाल की तौर पर संगीत रत्नाकर में 254 रागों का शास्त्रोक्त विवरण आया है |

उत्तर भारतीय संगीत के महान शास्त्रकार स्व. पं. विष्णु नारायण भातखंडेजी (10 अगस्त 1860 से 19 सितंबर 1936) ने इन सभी प्रकार के ग्रंथो का अध्ययन कर उत्तर भारतीय संगीत के रागों के शास्त्र का प्रमाणिकरण किया | इस दृष्टि से उनकेव्दारा लिखीत "श्रीमल्लक्षसंगीतम" (हिंदुस्तानी संगीत पध्दती शास्त्र - 4 खंड) और हिदुस्तानी संगीत पध्दती क्रमिक पुस्तक मालिका (क्रियात्मक - 6 खंड) इन दो ग्रंथ मालिकाओं का महत्व अनन्यसाधारण है | क्रमिक पुस्तक मालिकाओं के 6 खंडोंमें भातखंडेजीने हर एक राग के सरगमगीत, लक्षणगीत, बंदिश, ध्रुपद, धमार,तराणा, त्रिवट आदि कई रचनाओं का संग्रह दिया है | हर एक राग की जानकारी देनेसे पूर्व प्रारंभ में उस राग के प्राचनी ग्रंथों में आये संदर्भोंको संस्कृत श्लोक एवं अवतरणों के साथ लिखा गया है | इतनाही नही तो कुछ रागों के लक्षणगीतों का लेखन स्वयं भातखंडेजी ने "चतुर" उपनाम से किया है |

प्रस्तुत शोध लेख अंतर्गत स्व. पं. भातखंडेजीव्दारा लिखीत केवल आश्रय रागों के लक्षणगीतों की चर्चा की गई है | रागों के उत्पत्ती नुसार जो भेद पाये जाते है, उनमें आश्रय राग अर्थात जनक रागों का एक वर्ग है | वहि दुसरी ओर आश्रित अर्थात जन्य रागों का भी एक वर्ग है | वास्तव में देखा जाए तो शास्त्रीय संगीत की प्रारंभिक शिक्षा ग्रहण करनेवाले छात्रों को लक्षणगीत यह गीतप्रकार सिखाया जाता है | साथ ही साथ उन्हे आश्रय राग और आश्रित राग यह संकल्पनाएं भी सिखाई जाती है |

जब थाट और राग का एक ही नाम हो , तो उस राग को आश्रय राग के नामसे जाना जाता है | किन्तु यदि थाट और राग का नाम अलग अलग हो, तो ऐसी स्थिती में उस राग को आश्रित राग के

नाम से जाना जाता है | साधारणत: स्व.पं. वि.ना. भातखंडेजीव्दारा निम्न प्रकारसे 10 थाटों के नाम उनके स्वरलक्षण अनुसार दिये गये है |

1) बिलावल - सभी शुध्द स्वर
2) कल्याण - तीव्र मध्यम का प्रयोग
3) काफि - गांधार एवं निषाद कोमल
4) खमाज - कोमल निषाद
5) भैरव - कोमल रिषभ एवं कोमल धैवत
6) मारवा - कोमल रिषभ, तीव्र मध्यम
7) पुर्वी - कोमल रिषभ, कोमल धैवत एवं तीव्र मध्यम
8) असावरी - गांधार, धैवत, निषाद कोमल
9) भैरवी - रिषभ, गांधार, धैवत, निषाद कोमल
10) तोडी - रिषभ, गांधार, धैवत कोमल, तीव्र मध्यम

इन सभी आश्रय रागों के क्रमिक पुस्तक मालिका के खंड 2 और खंड 3 में वर्णित लक्षणगीत निम्नप्रकार से पाये जाते है -

1 राग (अल्हैया) बिलावल (तीनताल)

स्थाई :- तब कहत अल्हैया रुप "चतुर" जब शुध्द सुरन को मल मिलावत,दोनो निखाद लगत सुमधुर ||

अंतरा :- धैवत वादि गा संवादी, समय कहत दिन प्रथम प्रहर ||

संचारी :- बडो ज्ञान वाको जो जानत, अष्टभेद बिलावलि सुसंमत ||

अभोग :- शुध्द अल्हैया देवगिरी कुकुभ साख शुक्ल इमनी परदा तब ||

(**संदर्भ -** क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 2 पृष्ठ 79)

भावार्थ :- "चतुर" अर्थात पं. वि.ना. भातखंडे कहते है, की बिलावल राग मे सभी स्वर शुध्द है और दो निषादों का प्रयोग किया जाता है | वादि स्वर धैवत और संवादि स्वर गांधार है | गायन समय दिन का प्रथम प्रहर है | विव्दान लोग बिलावल के शुध्द बिलावल, अल्हैया (बिलावल), देवगिरी (बिलावल), कुकुभ (बिलावल), साख, शुक्ला (बिलावल), इमनी बिलावल, सरपरदा बिलावल ऐसे आठ भेद मानते है |

2 राग (यमन) कल्याण (एकताल)

स्थाई :- सब गुणिजन इमन गात तीवर सूर करत साथ

सा सा रे रे ग ग म म प प ध ध नी नी रे रे ग रे सा रे सा नी ध प ||

अंतरा :- सुर वादि गांधार साध, समवादि कर निखाद रात समय प्रथम प्रहर "चतुर" सुजन मन रिझात ||

(**संदर्भ -** क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 2 पृष्ठ 21)

भावार्थ :-"चतुर" अर्थात पं. विष्णु नारायण भातखंडेजी कहते है, यमन राग में तीव्र स्वर (मध्यम) साथ करता है | (इस लक्षणगीतके स्थाई के अंत में एक स्वरमालिका दि गयी है |) यमन राग का वादि स्वर गांधर और संवादि स्वर निषाद है | यमन राग रात्री के प्रथम प्रहर में गाया जाता है | यह एक मनोरंजक (मन को रिझानेवाला) राग है |

3 राग काफि (एकताल)

स्थाई :- गुणी गावत काफी राग खरहरप्रिय मेल जनित

कोमल ग नि उज्वल पर, सुर पंचम वादि साध |

अंतरा :- सरल सरुप विपश्चित, मानत सब सुध अविकल,

आश्रय गुनि "चतुर" कहत ||

(**संदर्भ -** क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 2 पृष्ठ 320)

भावार्थ :- "चतुर" अर्थात पं. विष्णु नारायण भातखंडेजी कहते है खरहरप्रिय (कर्नाटक संगीत का मेल) थाट से काफी राग की निर्मिती होती है | इस राग में गांधार एवं निषाद स्वर कोमल है | प रे मुख्य संगती और पंचम वादि स्वर है | ग एवं नि के